श्री पावापुरी तीर्थ

का

प्राचीन इतिहास

लेखक—

पूरण चन्द नाहर

एम० ए०, बी० एल०, एम० आर० ए० एस०,

एम० ए० एस० बी०, इत्यादि

PRINTED BY MAHALCHAND BAID AT THE OSWAL PRESS.
19, Synagogue Street, Calcutta.

— AND —

PUBLISHED BY P. C. NAHAR
48, Indian Mirror Street, Calcutta.

निवेदन

परम पवित्र श्री पावापुरी तीर्थ के प्राचीन इतिहास का यह छोटा सा निबन्ध आज अपने साधर्म्मी बन्धुओं के करकमलों में, अर्पित करते हुए मुझे बड़ा ही हर्ष है। यों तो अपने समस्त तीर्थंकरों की कल्याणक भूमि पवित्र तीर्थ माने गये हैं परन्तु यह स्थान जैनियों के लिये विशेष महत्व का है। आज समग्र जैन समाज अपने चौवीसवें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी के शासन की छत्रछाया में चल रहे हैं। आज उनकी वाणी, उनकी त्रिपदी के आधार पर ही जैन सिद्धान्त की रचना हुई है। वे ही जिस तीर्थ की स्थापना कर गये थे वही साधु साध्वी, श्रावक श्राविका अद्यावधि श्रीसंघ के अंगस्वरूप चले आते हैं। इसी कारण श्रीसंघ के जन्मदाता का वही निर्वाण स्थान प्रत्येक जैन-धर्मानुयायी के दर्शन और पूजन करने योग्य है, इसमें सन्देह नहीं। सोने में सुगन्धि की तरह पवित्रता के अतिरिक्त यह स्थान बड़ा ही चित्ताकर्षक है, और शांति भाव के साथ २ अपने धर्म महत्व को, और श्री वीर भगवान् के उच्च आदर्श और त्याग को स्मरण कर दर्शकों का हृदय गद्गद् हो जाता है। ऐसे स्थान के इतिहास जानने और वहां की दर्शनीय वस्तुएं देखने की मेरी बहुत दिनों से अभिलाषा थी। वहां के जो कुछ लेख मैंने संग्रह किये थे वे पाठकों को "जैन लेख संग्रह" के प्रथम और द्वितीय खंडों में यथा स्थान में मिलेंगे। हमारे साधर्म्मी बन्धुओं के ज्ञातार्थ इस स्थान का संक्षिप्त विवरण लिखा गया है, आशा है कि ये उपयोगी होंगे।

४८, इण्डियन मिरर स्ट्रीट,
कलकत्ता
वीर सं० २४५६

पूरण चंद नाहर

श्री पावापुरी तीर्थ

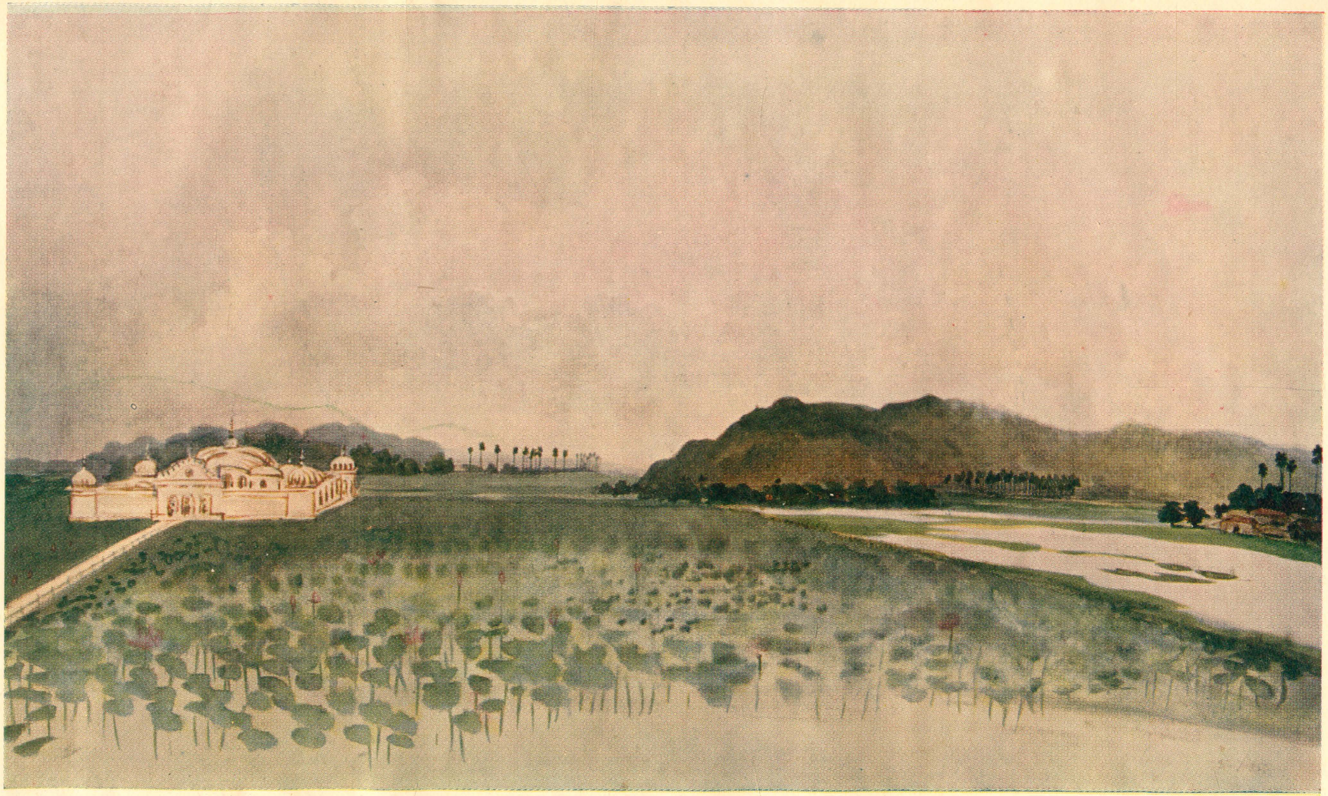

जलमंदिर का दृश्य

श्री तीर्थ पावापुरीजी

का

प्राचीन इतिहास

श्री तीर्थ पावापुरी के नाम से जैन समाज सुपरिचित हैं। आज २४५६ वर्ष हुए कि अपने शासन नायक अन्तिम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान स्वामी इसी पावापुरी में असंख्य जीवों को उपदेश देते हुए पौद्गलिक देह त्याग कर निर्वाण प्राप्त हुए थे। बिहार-उड़ीसा प्रान्त के बिहार-शरीफ शहर से सात माईल दक्षिण की ओर यह पवित्र स्थान अवस्थित है। वर्त्तमान समय इस पावापुरी ग्राम की आबादी लग-भग तीन सौ घर की है जिनमें भूमिहार ब्राह्मणों की ही अधिक संख्या है।

जैनागम से ज्ञात होता है कि उस समय पावापुरी (प्राचीन-अपापापुरी) में हस्तिपाल नामक सामन्त राजा वहां राज्य करते थे, और वहां की जीर्ण लेखशाला में भगवान् अन्तिम चातुर्मास ठहरे थे। उस समय उनकी आयु बहत्तर वर्ष की थी। कार्त्तिक कृष्ण अमावस्या की शेष रात्रि के समय चरम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी इस नश्वर कलेवर को त्याग कर इसी पावापुरी में निर्वाण प्राप्त हुए थे।

जैन शास्त्र से और भी ज्ञात होता है कि उस समय देवता लोग जो वहां निर्वाण महोत्सव मनाने को आये थे उन्होंने उसी स्थान में स्मरण चिन्ह रूप एक दिव्य स्तूप स्थापित किये थे, और भगवान् के बड़े भाई श्री नन्दिवर्द्धन राजा

वहां एक चैत्यालय निर्माण कराये थे। पावापुरी गांव का वर्त्तमान मन्दिर उसी स्थान में बना हुआ है, और वहां तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी की मूर्त्ति एवं चरण पादुका प्रतिष्ठित है जो कि "गांव मन्दिर" के नाम से प्रसिद्ध है। गांव के बहिर्भाग दक्षिण की तरफ एक बड़ा तालाव है, जिसके मध्य भाग में एक विमानाकार मन्दिर बना हुआ है जिसको "जलमन्दिर" कहते हैं। यहीं पर भगवान् के भौतिक देह की अन्त्येष्टिक क्रिया सम्पादित हुई थी। अपने श्वेताम्बर लोगों में यह प्रवाद है कि भगवान् का जिस समय अग्निसंस्कार हुआ था उस समय वहां पर जो देवता मनुष्यादि असंख्य प्राणी एकत्रित हुए थे, वे निज २ स्थान की ओर लौटते समय वहां की भस्म और मिट्टी पवित्र समझ कर थोड़ी २ उठा कर ले गये थे, इस कारण वहां एक तालाव सा बड़ा गढ़ा हो गया था।

दिगम्बरी लोग भगवान् महावीर का निर्वाण समय और स्थान अन्य रूप से बतलाते हैं। दिगम्बर जैन पण्डित काव्यतीर्थ श्रीमान् गजाधरलालजी ने अपने "महावीर स्वामी और दीवाली" नामक पुस्तक में भगवान् का मोक्षगमन इस प्रकार वर्णन किया है :—

> "भगवान् उपर्युक्तप्रकारसे उपदेश करते २ बहत्तरवें वर्ष जब कि मोक्षहोनेमें एकमास बाकी रहगयाथा बिहार प्रांत के पावापुर नामक स्थान पर पधारे। पावापुरके बनमें एक सरोवर था उसके बीचमें एक ऊंचा टीला था उसपर एकजगह बैठकर शुक्लध्यानका प्रारम्भ किया जिसके योगसे शेष रही ८५ कर्मप्रकृतियोंका सर्वथा नाशकरके कार्त्तिककृष्ण १४ को रात्रिकेशेष और अमावस्याके प्रभात ही स्वातिनक्षत्रमें भगवान् नश्वरमनुष्यशरीर को छोड़ कर ७२ वें वर्ष में निर्वाण को (लोकशिखरपर जहां सब मुक्तजीव विराजते हैं) प्राप्त हो गये"।

उपरोक्त उद्धृत अंश से पाठकों को ज्ञात होगा कि श्री वीर भगवान् के निर्वाण के विषय में दोनों सम्प्रदायों में दो प्रधान अन्तर है जो कि यहां स्पष्ट किया जाता है :—

[१] निर्वाण तिथि

श्वेताम्बरियों के ग्रन्थानुसार कार्त्तिक कृष्णा अमावस की शेष रात्रि और दिगम्बरी मत से कार्त्तिक कृष्णा चतुर्दशी की शेष रात्रि मानी गई है।

[२] निर्वाण स्थान

श्वेताम्बरी मत से हस्तिपाल राजा की लेखशाला में भगवान् का पौद्गलिक देहावसान हुआ और दिगम्बरी मतानुसार तालाब के मध्य में टीले पर भगवान् का निर्वाण माना गया है।

यदि पाठक निरपेक्ष होकर विचारें तो पहिले अन्तर के विषय पर कोई विचार करना सम्भव नहीं है, क्योंकि अपने २ शास्त्र सभों के मान्य हैं। यदि हम श्वेताम्बर हैं तो हम श्री निर्वाण महोत्सव अमावस्या की पिछली रात्रि को ही करेंगे, और उसी दिन श्री वीर भगवान् की मुक्ति होने पर पूर्ण विश्वास रखेंगे। अथवा यदि हम दिगम्बरी हैं तो एक दिन आगे बढ़ कर चतुर्दशी की पिछली रात्रि को ही निर्वाण का समय मानेंगे और पूर्ण श्रद्धा पूर्वक उसी दिन उत्सव मनावेंगे।

अब दूसरी बात—निर्वाण स्थान के विषय में विचार दृष्टि से यही ज्ञात होता है कि श्वेताम्बरियों का कथन ही अधिक श्रद्धेय और विश्वासयोग्य है। हमारे श्वेताम्बरी शास्त्र में प्रायः सर्वत्र वीर भगवान् का निर्वाण स्थान पावापुरी ग्राम में वर्णित है, और इसी प्रकार और २ आगमों में जहां कि श्री महावीर स्वामी के निर्वाण का वर्णन मिलता है वहां पर श्री पावापुरी ग्राम में ही अन्तिम चातुर्मास और निर्वाण होना लिखा है। पाठक महाशय को स्मरण होगा कि पं० गजाधरलालजी के वर्णन में दिगम्बरी शास्त्रानुसार निर्वाण के एक मास पूर्व ही भगवान् का पावापुरी आने का उल्लेख है, परन्तु श्वेताम्बर सिद्धान्तानुसार चातुर्मास में साधुओं का इस प्रकार विहार नहीं होता है, वे एक ही स्थान में

वर्षा के चार मास व्यतीत करते हैं। सरोवर के मध्य भाग के टीले पर पानी को उल्लंघन करके केवल एकाकी श्री महावीर स्वामी का एकान्त में निर्वाण होना असम्भव सा ज्ञात होता है। "श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा" जो कि दिगम्बर समाज की एक मुख्य संस्था है उसके प्रतिष्ठाता स्वर्गीय कुमार देवेन्द्र प्रसादजी जैन एक प्रसिद्ध विद्वान् और कवि थे। उनके प्रकाशित चौबीस तीर्थङ्करों के पट्ट (चार्ट) में श्री महावीर स्वामी का निर्वाण स्थान सरोवर तट लिखा है। यद्यपि अग्नि संस्कारादि कार्य ऐसे स्थानों में होना सम्भव हो सकता है, परन्तु भगवान् महावीर परमात्मा का निर्वाण इस प्रकार एकाकी और एकान्त में होना कदापि सम्भव नहीं है। इससे इस बात पर विशेष श्रद्धा और विश्वास हो सकता है कि श्वेताम्बरी शास्त्रों के वर्णनानुसार भगवान् महावीर आजीवन लोक हितार्थ आयुः के शेष क्षण पर्यन्त अमृत रूपी देशना देते हुए इसी पावापुरी गांव में ही देह त्याग कर निर्वाण प्राप्त हुए हैं।

निर्वाण तिथि और स्थान के विषय में अधिक लिखना निष्प्रयोजन है। श्री वीर भगवान् के विषय में तो उनके जन्म के पूर्व से ही श्वेताम्बर और दिगम्बर के वर्णन में कई स्थूल विषयों में भेद पाया जाता है। श्वेताम्बरियों में फिर चाहे वह स्थानकवासी हो, चाहे संवेगी हो, चाहे तेरहपन्थी हो—देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि से इन्द्रादेशानुसार हरिणगमेषी देवता द्वारा त्रिशला माता की कुक्षि में भगवान् के संक्रमण होने की कथा सर्वत्र मान्य है परन्तु दिगम्बरी सिद्धान्त में यह बात मान्य नहीं है। श्वेताम्बर सिद्धान्तानुसार भगवान् चतुर्दश स्वप्न सूचित अथवा दिगम्बर मतानुसार षोडश स्वप्न सूचित होकर माता के गर्भ में आये थे। इस कारण दोनों मतानुसार इतना पार्थक्य नहीं है जितना कि श्वेताम्बर मतानुसार भगवान् के यौवनारम्भ के समय विवाहादि संसार धर्म के वर्णन में और दिगम्बरी ग्रन्थानुसार भगवान् के आजीवन अविवाहित रहने के वर्णन में भेद पाया जाता है। कल्पसूत्र में भगवान् के परिवार वर्णन में उनकी पुत्री

प्रियदर्शना और जामाता जमाली का स्पष्ट उल्लेख है। इस प्रकार दोनों सम्प्रदायों का मतभेद है। विषयान्तर के कारण यहां अधिक वर्णन की आवश्यकता नहीं हैं। कारण कि दोनों सम्प्रदाय वाले उपरोक्त तीर्थ पावापुरी के जलमन्दिर को मानते हैं, परन्तु दिगम्बरी सम्प्रदाय वाले गांव मन्दिर को निर्वाण स्थान नहीं मानते हैं।

प्राचीन होने के कारण श्वेताम्बर सम्प्रदाय वाले ही अद्यावधि समस्त तीर्थों की तरह, इस पवित्र पावापुरी तीर्थ की रक्षा व देखरेख बराबर करते आ रहे हैं। श्वेताम्बर श्रीसंघ की ओर से जो सज्जन मैनेजर नियुक्त होते हैं उनको गांव मन्दिर, जलमन्दिर, समोसरनजी मन्दिर, धर्मशाला एवं रास्ता वगैरह का प्रबन्ध करना पड़ता है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त एक श्री महावीर स्वामी का मन्दिर और भी है जो कि मुर्शिदाबाद-अजीमगञ्ज निवासिनी बाई महताब कुंवर की ओर से सरोवर के उत्तर तरफ बना है।

वर्त्तमान समय में लगभग तीस वर्ष हुए दिगम्बरी लोगों ने जलमन्दिर के सरोवर के तट पर पूर्व दिशा में अपना एक मन्दिर और धर्मशाला बनवाये हैं। श्वेताम्बर मन्दिरों के संक्षेप वर्णन के साथ मुझे वहां जो कुछ ऐतिहासिक साधन प्राप्त हुए हैं वह यहां उपस्थित करना समुचित होगा।

[१] गांव मन्दिर

यह मन्दिर पावापुरी गांव के पश्चिम की ओर अवस्थित है और मन्दिर के चारो तरफ एक बड़ा हाता (कंपाउण्ड) घिरा हुआ है। इसी हाते के अन्दर ही श्वेताम्बर संघ की पेढ़ी, तीर्थ भण्डार, और धर्मशाला बनी हुई है। धर्मशाला अधिकांश में द्वितल है और उसमें सैकड़ों कोठरियां मौजूद हैं, जिनपर बनवाने वालों की पटरियां लगी हुई हैं। दर्शकों को यह देख कर बड़ा ही आनन्द होता है कि एक छोटे से गांव के मन्दिर में, केवल एक परम पवित्र तीर्थ समझ कर ही, देश के सब प्रान्त के धार्मिक सज्जन उस स्थान में यात्रा करने वाले भाइयों के लिये अपना द्रव्य व्यय किये हैं, और वास्तव में वहां सैकड़ों नहीं बल्कि हजारों

तीर्थ सेवा में आये हुए यात्री लोग आराम से रह सकते हैं। मन्दिर के दक्षिण ओर मुनिराजों के लिये एक उपाश्रय भी बना हुआ है और उसी के पीछे की तरफ आगे बढ़ कर जो एक मंजिली इमारत दृष्टिगोचर होती है वही पुरानी बनी हुई धर्मशाला है जो कि नौरत्न के नाम से प्रसिद्ध है।

वर्त्तमान मन्दिर पांच भव्य शिखरों से सुशोभित है और दो मंजिला बना हुआ है। मन्दिर की प्रशस्ति और वहां के लेखों से स्पष्ट है कि—शाहजहां बादशाह के समय विक्रम संवत् १६९८ वैशाख सुदी ५ सोमवार को खरतरगच्छाचार्य श्री जिनराज सूरिजी की अध्यक्षता में बिहार निवासी श्वेताम्बर श्रीसंघ ने यह "वर विमानाकार" मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई थी उस समय कमललाभोपाध्याय एवं पं० लब्धकीर्त्ति आदि कई विद्वान् साधु मंडली उपस्थित थी, जिन लोगों का प्रशस्ति आदि लेखों में उल्लेख मिलता है। मन्दिर की प्रशस्ति लगभग सवा फुट लम्बी और एक फुट चौड़ी श्याम रङ्ग की शिला पर सुन्दर अक्षरों में खुदी हुई है। बड़े हर्ष का विषय है कि ऐसे तीर्थराज के मन्दिर की प्रशस्ति को उद्धार करने का मुझे ही प्रथम सौभाग्य प्राप्त हुआ था, जिसको मैंने "जैन लेख संग्रह" भा० १ के पृष्ठ ४६-४७ में प्रकाशित किया था। पश्चात् कई वर्षों बाद सुयोग मिलने पर उस प्रशस्ति की शिला को अति सावधानी पूर्वक वेदी के नीचे से निकलवा कर मन्दिर की दीवार पर यथा स्थान में स्थापित कर दी गई, और सम्पूर्ण प्रशस्ति पुनः लेख संग्रह के २य खण्ड पृष्ठ १५८-६० में प्रकाशित हुई है।

मूल मन्दिर में वेदी के मध्य भाग में मूलनायक श्री महावीर स्वामी की श्वेत पाषाणमय मनोज्ञ मूर्त्ति विराजमान है, और दाहिने तरफ श्री आदिनाथ की एवं बांई तरफ श्री शान्तिनाथ की उसी प्रकार श्वेत पाषाण की मूर्त्तियां हैं। इनके अतिरिक्त वहां कई धातु की पंचतीर्थियां और छोटी २ मूर्त्तियां रखी हुई हैं। मूल वेदी के दाहिने तरफ की वेदी में सं० १६४५ वैशाख शुक्ल ३ गुरुवार का प्रतिष्ठित एक विशाल चरणयुगल विराजमान है। मूल गभारे के दक्षिण की

दीवार के एक आले (गोंखले) में भी सं० १७७२ माह सुदी १३ सोमवार की प्रतिष्ठित श्री पुंडरीक गणधर की चरणपादुका है, और मूल वेदी के बांई तरफ की वेदी पर श्री वीर भगवान् के ११ गणधरों की चरणपादुका खुदी हुई है। यह चरणपादुकापट्ट मन्दिर के साथ संवत् १६९८ का प्रतिष्ठित है और दूसी वेदी पर संवत् १९१० में श्री महेन्द्रसूरि की प्रतिष्ठित श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण की पीले पाषाण की सुन्दर मूर्त्ति रखी हुई है। मूल मन्दिर के बीच में वेदी पर संवत् १६९८ का लेख सहित कसौटी पाषाण की अति भव्य चरणपादुका विराजमान है।

मन्दिर के चारो कोने में चार शिखर के अधो भाग की चार कोठरियों में कई चरण और मूर्त्तियां हैं। इन पर के जिन लेखों के संवत् पढ़े जाते हैं उन सबों से प्रतिष्ठा समय विक्रमीय सप्तदश शताब्दि से वर्त्तमान शताब्दि पर्यन्त पाये जाते हैं। सिवाय इन मूर्त्तियों के मन्दिर में दिक्पाल (भैरव) शासनदेवी आदि भी विराजमान हैं। प्राचीन मन्दिर का सभा मण्डप आदि अपरिसर होने के कारण बैठने का स्थान संकुचित था जो कि अजीमगञ्ज निवासी बाबू निर्मल कुमार सिंह नवलखा ने हाल ही में मन्दिर के बहिर्भाग को विशाल बनवा कर इस कमी की पूर्त्ति कर दी है।

[२] जलमन्दिर

वास्तव में यह स्थान की, जैसी कि तीर्थ पर्यटन के समय बहुत से यात्री लोगों ने मनोज्ञ और चित्ताकर्षक दृश्य की वर्णना एवं महिमा अपने २ पुस्तकों में की है, उसमें किञ्चिन्मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं है। वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में जिस समय सरोवर स्थित कमलों का पुष्प पत्र से पूर्ण विकाश रहता है, उस समय वहां का दृश्य एक अनोखी शोभा को धारण करता है। यदि कोई भावुक उस समय अपनी शुद्धभावना और आत्म चिन्तवन के लिये जलमन्दिर में उपस्थित हो तो इस दुःखमय संसार की अशान्ति को सहज ही में भूल सकता है। मन्दिर तक पहुंचने के लिये शताब्दि हुए सरोवर के तीर से एक सुन्दर पुल बना

हुआ है। यह पुल लगभग ६०० फीट लम्बा है। पहिले जब यह पुल बना हुआ न था उस समय यात्री लोग नाव में बैठ कर मन्दिर में पहुंचते थे। मन्दिर सरोवर के मध्य भाग में रहने के कारण उक्त पुल के अतिरिक्त चारों ओर जलाकीर्ण और कमलों से आच्छादित है, और वहां हजारों छोटे बड़े मत्स्य निर्भय हो स्वतन्त्रता-पूर्वक फिरते हुए दिखाई देते हैं। पाठक इस दृश्य का परिचय यहां दिये गये चित्रों से अच्छी तरह पा सकते हैं।

जलमंदिर में कोई शिखर बना हुआ नहीं है, तौभी केवल गुम्बज सहित यह मंदिर बहुत दूर तक दिखाई पड़ता है। मंदिर के भीतर कलकत्ता निवासी सेठ जीवनदासजी की सं० १८२८ की बनवाई हुई मकराणे की सुन्दर तीन वेदियां हैं। मध्यम वेदी में श्री वीर प्रभु की प्राचीन छोटी चरणपादुका विराजमान हैं। इस चरण पट्ट पर कोई लेख नहीं ज्ञात होता और चरण भी बहुत प्राचीन होने के कारण घिस गये हैं। इस वेदी पर श्री महावीर स्वामी की एक धातु की मूर्त्ति रखी हुई है जो सं० १२६० ज्येष्ठ शुक्ल २ को आचार्य श्री अभयदेवसूरिजी की प्रतिष्ठित है, और यही मूर्त्ति स्नात्रादि पूजा के समय उपयोग में लाई जाती है कारण कि जलमंदिर में चरणों के सिवाय और कोई मूर्त्ति नहीं है। दाहिनी वेदी पर श्री महावीर प्रभु के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी की, और बांयी पर पञ्चम गणधर श्री सुधर्म स्वामी की चरणपादुकायें विराजमान है, ये दोनों चरण संवत् १८३५ के प्रतिष्ठित हैं।

मंदिर के बाहर दोनों तरफ दो क्षेत्रपाल हैं और नीचे की प्रथम प्रदक्षिणा में एक ओर ब्राह्मी, चन्दनादि सोलह सतियों का विशाल चरणपट्ट सं० १८३१ की और दूसरी ओर सं० १७३५ की प्रतिष्ठित श्री दीपविजयजीगणि की पादुका अवस्थित है। बाहर की प्रदक्षिणा में सं० १६५८ की प्रतिष्ठित श्री जिनकुशलसूरिजी की पादुका है। मन्दिर की उत्तर दिशा में सरोवर में उतरने के लिये सीढ़ियां बनी हुई हैं।

श्री पावापुरी तीर्थ

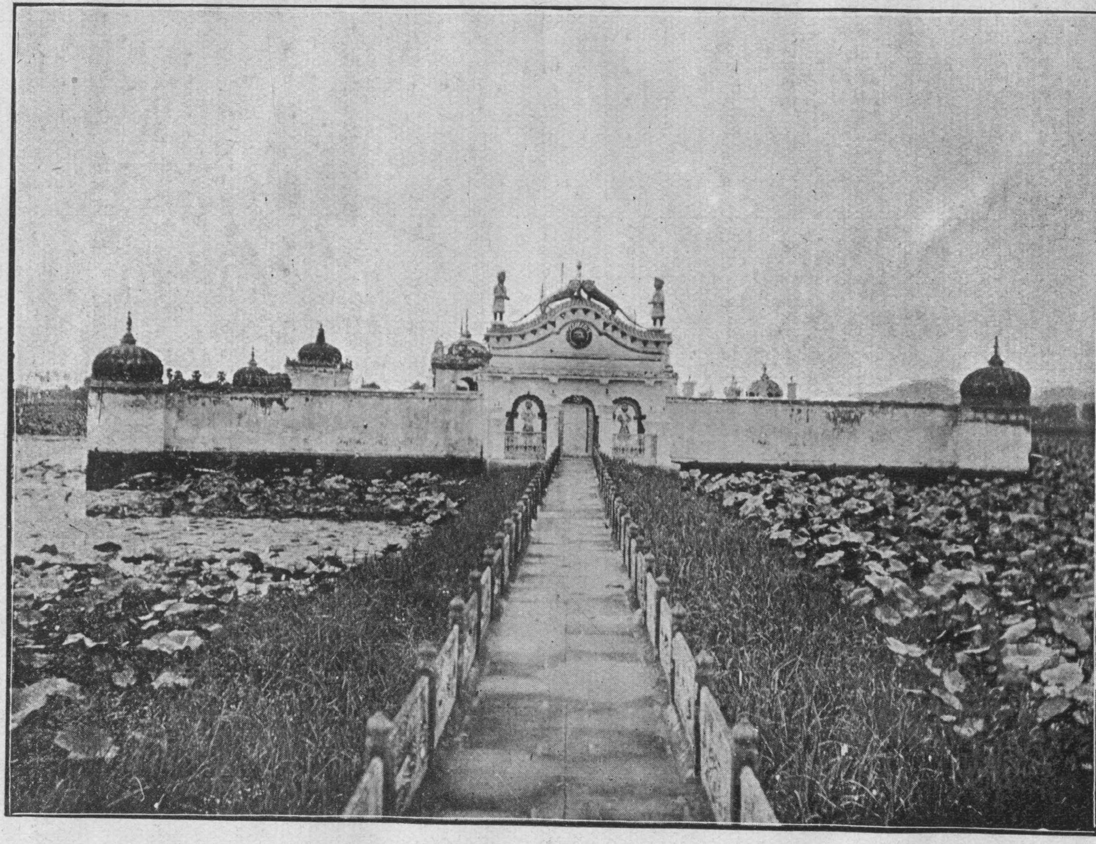

जलमंदिर के सन्मुख का दृश्य

[३] श्री समोसरणजी

यह मंदिर और हाता (कम्पाउण्ड) वर्त्तमान शताब्दि का बना हुआ है। श्री पावापुरीजी ग्राम की पूर्व दिशा में आम्र उद्यान के पास एक छोटा सा स्तूप बना हुआ है वही भगवान् के प्राचीन समोसरण का स्थान था ऐसा प्रवाद है। यह स्थान थोड़ी दूरी पर रहने के कारण श्वे० श्रीसंघ ने सरोवर के तट पर ही यह समोसरणजी की रचना की है और मंदिर बनवाये हैं। गोलाकार हाते के चारों ओर लोहे की रेलिंग लगी हुई है और भूमि से प्राकारत्रय का भाव दर्शाते हुए मध्य भाग में एक अष्टकोण सुन्दराकृति मन्दिर बना हुआ है। इसकी प्रतिष्ठा श्वेताम्बर श्रीसंघ की ओर से तत्कालीन मैनेजर बिहार निवासी बाबू गोविन्दचंद जी सुचन्ती ने संवत् १९५३ में करवाई थी। उस मंदिर के मध्य में चतुष्कोण वेदी पर संवत् १६४५ वैशाख शुक्ल ५ का प्रतिष्ठित श्री वीर प्रभु का चरणयुगल विराजमान है। इसके अतिरिक्त समोसरणजी में और कोई मूर्त्ति अथवा चरण नहीं है। इस समोसरणजी के मंदिर के समीप पश्चिम दिशा में लेखक की स्वर्गीया मातुश्री श्रीमती गुलाब कुमारी की द्वितल धर्मशाला बनी हुई है, और उत्तर की तरफ रायबहादुर बुधसिंहजी दुधोड़िया की धर्मशाला है।

[४] बाई महताब कुंवर का मन्दिर

यह श्री महावीर स्वामी का मंदिर द्वितल बना हुआ है। ऊपर की भूमि में एक चौमुखजी विराजमान हैं और नीचे मूल वेदी पर श्री वीर भगवान् की मूर्त्ति के साथ और कई पाषाण व धातु की मूर्त्तियां हैं। सुना जाता है कि मुर्शिदाबाद-अजीमगञ्ज निवासिनी बाई महताब कुंवर ने अपनी देखरेख में यत्न के साथ यह मंदिर बनवा कर सं० १९३२ में प्रतिष्ठा कराई थी।

इस पवित्र तीर्थ की यात्रा सर्व जैनमात्र को एक वार अवश्य करनी चाहिये। वर्त्तमान में यहां अपने शासन नायक की निर्वाण तिथि पर भिन्न २ प्रदेशों के सैंकड़ों यात्री एकत्रित होते हैं और उस समय दीन दुःखियों को अन्न

वस्त्रादि वितरण कर अतुल पुन्य के भागी बनते हैं। इस मेले के प्रसंग पर आस-पास के गांव के अतिरिक्त दूर २ के कुष्टादि रोग पीड़ित, चक्षु विहीन, एवं पङ्गु आदि नाना प्रकार रोग ग्रसित हजारों की संख्या में उपस्थित होते हैं जिनको विश्राम करने के लिये एक भी स्थान न होने के कारण लेखक की स्वर्गीया पत्नी श्रीमती कुन्दन कुमारी की स्मृति में एक "दीनशाला" बनवाई गई है, जिसको उद्घाटन क्रिया कुछ वर्ष हुए आगरा निवासी देशभक्त श्रीयुत चांदमलजी वकील के करकमलों से सम्पादित हुई थी। आजकल इसी दीनशाला में पटना डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड की तरफ से एक आयुर्वेद चिकित्सालय भी खोला गया है जहां से रोगी लोग बिना मूल्य बराबर लाभ उठाते हैं। इस निर्वाणोत्सव पर कार्त्तिक शुक्ल प्रतिपदा को बड़े धूमधाम से रथोत्सव-वरघोड़ा भी निकलता है।

मैंने पाठकों की सेवा में तीर्थ श्री पावापुरीजी का संक्षिप्त इतिहास उपस्थित किया है। अब यहां ऐतिहासिक दृष्टि से कुछ दिग्दर्शन करा कर इस प्रबन्ध को समाप्त करूंगा।

भारतवर्ष के अंग, बङ्ग, प्रान्त में ही जैनियों के कई प्रसिद्ध तीर्थ हैं। जिनमें श्री सम्मेतशिखर, चंपापुरी, राजगृह, पावापुरी और पाटलीपुत्र (पटना) आदि मुख्य हैं। जहांतक मुझे उपलब्ध हुआ है, इन समस्त स्थानों में विक्रमीय द्वादश शताब्दि के पूर्व की लेख सहित उल्लेख योग्य कोई वस्तु अद्यावधि दृष्टिगोचर नहीं हुई। कलिङ्ग देशमें भुवनेश्वर के समीप खण्डगिरि उदयगिरि के खारवेल राजा का लेख विशेष प्राचीन और विख्यात है। अङ्ग और वङ्ग देश में अद्यावधि जो कुछ लेख सहित मूर्त्ति मिले हैं उनमें राजगृह स्थित गांव मन्दिर के दूसरे मंजिले में श्री शान्तिनाथ भगवान् की संवत् १११० की मूर्त्ति के अतिरिक्त अन्य प्राचीन कोई मूर्त्ति नहीं पाई गई। जलमंदिर स्थित सं० १२६० की प्रतिष्ठित धातु मूर्त्ति से भी प्राचीन और कोई मूर्त्ति या लेख वहां नहीं है। श्री हेमचन्द्राचार्यजी के पश्चात् जिस समय भारतवर्ष पर मुसलमानों का प्रबल आक्रमण चल रहा था,

इनकी राज्य विस्तार की लिप्सा बढ़ती आ रही थी, उस समय के शताब्दियों का कोई प्रमाणिक इतिहास नहीं मिलता है। कारण भी स्पष्ट है कि इस घोर संघर्षण के समय देशवासी जैन-अजैन सब लोग अपने २ धन प्राण और कुटुम्ब की रक्षा में इस प्रकार लगे हुए थे कि तीर्थ आदि स्थानों को अक्षत रखना असम्भव था। पुनः जिस समय विजेता और पराजित प्रजा के बीच सद्भाव का अङ्कुर बढ़ने लगा उस समय सब लोग अपने २ धर्म और नष्टप्राय धर्म स्थानों के उद्धार में तन मन और धन से कटिबद्ध हुए। मुझे जो कुछ ऐसी खोज में प्राचीन लेख प्राप्त हुए हैं उनसे ज्ञात होता है कि दिल्ली सम्राट् फिरोजशाह तोघलक के समय बिहार प्रान्त में श्वेताम्बर जैनाचार्य और श्रावकों के अदम्य उत्साह एवं परिश्रम से उस प्रान्त के तीर्थों में विशेष उन्नति हुई थी। राजगृह के वैभार पर्वतोपरि श्री पार्श्वनाथ स्वामी के मंदिर की संवत् १४१२ की प्रशस्ति भी सर्व प्रथम मैंने ही प्रकाशित किया था और उस समय की परिस्थिति का वर्णन प्रशस्ति में है। उस समय श्री पावापुरी तीर्थ का भी जीर्णोद्धार सुचारु रूप से हुआ होगा परन्तु वर्त्तमान में वहां उस समय का कोई भी चिन्ह विद्यमान नहीं है।

मुगल सम्राट् अकबर हिन्दूधर्म के विशेष पक्षपाती थे। आप सर्व जाति, सम्प्रदाय के प्रसिद्ध २ धर्म याचकों को अपनी राजसभा में आमन्त्रित कर सम्मानित किये थे। इनके समय में उत्तर भारत में दिगम्बरी जैनियों का अस्तित्व विशेष नहीं था। स्वनामख्यात पाश्चात्य विद्वान् विन्सेंट स्मिथ साहिब ने अपनी 'अकबर' नामक पुस्तक में अकबर की राजसभा में जैनियों का क्या स्थान था, इस विषय पर अच्छा वर्णन लिखा है। श्वेताम्बर तपगच्छाचार्य श्री हीरविजय-सूरिजी को बादशाह अकबर की तरफ से जो कुछ फरमान मिले थे वे भी प्रसिद्ध है। श्वेताम्बर खरतरगच्छाचार्य श्री जिनचन्द्रसूरि आदि से भी सम्राट् का अच्छा परिचय था, और इन लोगों के उपदेश से ही अकबर ने बरस में कई दिन सब प्रकार की हिंसा बंद रखने की अपने राज्य में घोषणा की थी।

अकबर बादशाह के बाद शाहजहां सम्राट् के समय में इस तीर्थ के जी- र्णोद्धार का कार्य बिहार निवासी श्वेताम्बर संघ की तरफ से पूर्ण रूप से हुआ जिसका शाल प्रशस्ति आदि में स्पष्ट मिलता है। वर्त्तमान शताब्दि के प्रारम्भ में जिस समय संवत् १९१४ में गदर हुई थी और देशी सिपाही लोग बागी हुए उस समय इस प्रान्त में अपने तीर्थ स्थानों पर भी हानि पहुंची थी। समीपवर्ती राजगृह तीर्थ स्थित पञ्च पहाड़ों के बहुत से मंदिर नष्ट हुए थे। परन्तु श्री पावापुरीजी में इन लोगों का विशेष कोई उपद्रव नहीं हुआ था। इस समय यह तीर्थ सर्व प्रकार से सुरक्षित है। परन्तु मुझे खेद है कि अन्यान्य तीर्थ स्थानों की तरह यहां भी आजकल अपने दोनों सम्प्रदायों के वैमनस्य का पूरा प्रभाव पड़ा है। सन् १९२५ में अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमिटी के प्रेसिडेण्ट सर हुकमचंदजी वगैरह ने पटने की अदालत में इस तीर्थ के सम्बन्ध में भी मुकद्दमा प्रारम्भ किये हैं जिससे दोनों सम्प्रदायों की सब तरह से समय, शक्ति और धन की हानि हो रही है। ऐसे २ कलह में कोई भी शुभ परिणाम की आशा नहीं की जा सकती। शासन देव से मेरी यही प्रार्थना है कि तीर्थ स्थान को अविचल रखें और शासननायक श्री वीर निर्वाण भूमि की उत्तरोत्तर उन्नति करें।